वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वैद प्रकाश

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ रुपये फरवरी २०१४

कुल पृष्ठ संख्या 20, वजनः 40 ग्राम

अन्तःपथ

पेन्सिल की कहानी (यज्ञदत्त आर्य)	३ से ४
धर्म का स्वरूप की व्याख्या (श्री खुशहाल चन्द्र आर्य)	४ से ८
सच्ची गरिमा किस की गुरु की या गोविन्द की (श्री नरेन्द्र विद्यावाचस्पति)	८ से १२

निमन्त्रण

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला, प्रगति मैदान

१५ फरवरी २०१४ से २३ फरवरी २०१४ तक

गोविन्दराम हासानन्द के बुक स्टॉल पर आईए देखिए १००० पुस्तकों का अनुपम साहित्य संसार, ५०० के लगभग स्वयं प्रकाशित साहित्य, १०० से अधिक लेखकों का साहित्य, ७५ विभिन्न विषयों पर ग्रन्थ, ५० प्रकाशकों के प्रकाशन, सभी आयुवर्गोपयोगी

NkVk lk iRFkj

—प्रमोद शर्मा

एक किसान था। उसके खेत में पत्थर का एक हिस्सा जमीन से उपर निकला हुआ था, जिससे ठोकर खाकर वह कई बार गिर चुका था, और कितनी ही बार उससे टकराकर खेती के औजार भी टूट चुके थे।

रोजाना की तरह आज भी वह सुबह–सुबह खेती करने पहुँचा और इस बार भी वही हुआ। किसान का हल पत्थर से टकराकर टूट गया। किसान क्रोधित हो उठा और उसने निश्चय किया कि आज चाहे जो भी हो जाए वह इस चट्टान को जमीन से निकाल कर इस खेत के बाहर फैंक कर ही दम लेगा।

वह तुरंत गाँव से 4–5 लोगों को बुला लाया और सभी को लेकर वह उस पत्थर के पास पहुँचा और बोला,– यह देखो जमीन से निकले चट्टान के इस हिस्से ने मेरा बहुत नुक्सान किया है, और आज हम सभी को मिलकर इसे उखाड़कर खेत के बाहर फैंक देना है' और ऐसा कहते ही वह फावड़े से पत्थर के किनारे वार करने लगा। पर यह क्या! अभी उसने एक–दो बार ही मारा था कि पूरा–का पूरा पत्थर जमीन से बाहर निकल आया। साथ खड़े लोग भी अचरज में पड़ गए और उन्हीं में से एक ने हँसते हुए पूछा, 'क्यों भाई, तुम तो कहते थे कि तुम्हारे खेत के बीच में एक बड़ी से चट्टान दबी हुई है, पर यह तो मामूली सा पत्थर निकला।'

किसान भी आश्चर्य में पड़ गया। सालों से जिसे वह एक भारी–भरकम चट्टान समझ रहा था, दरअसल वह बस एक छोटा सा पत्थर था! उसे पछतावा हुआ कि काश उसने पहले ही इसे निकालने का प्रयास किया होता तो न उसे इतना नुकसान उठाना पड़ता और न ही दोस्तों के सामने उसका मजाक बनता।

हम भी कई बार जिन्दगी में आने वाली छोटी–छोटी बाधाओं को बहुत बड़ा समझ लेते हैं, और उनसे निपटने की बजाय तकलीफ उठाते रहते हैं। जरुरत इस बात की है कि हम बिना समय गंवाए उन मुसीबतों से लड़े, और जब हम ऐसा करेंगे तो तो कुछ ही समय में चट्टान सी दिखने वाली समस्या एक छोटे से पत्थर के समान दिखने लगेगी, जिसे हम आसानी से हल करके आगे बढ़ सकते हैं।

वेदप्रकाश

संस्थापक : **स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द**

वर्ष ६३ अंक ७ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, फरवरी, २०१४

सम्पा॰ **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व॰ **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

ck/k dFkk

ifUly dh dgkuh

—यज्ञदत्त आर्य

एक बालक अपनी माँ को पत्र लिखते हुए देख रहा था। अचानक उसने पूछा, 'दादी मां! क्या आप मेरी शरारतों के बारे में लिख रही हैं आप मेरे बारे में लिख रही है ना 'यह सुनकर दादी माँ रुकीं और बोलीं, 'बेटा, मैं लिख तो तुम्हारे बारे में ही रही हूँ, लेकिन जो शब्द मैं यहाँ लिख रही हूँ उनसे भी अधिक महत्व इस पेन्सिल का है जिसे मैं इस्तेमाल कर रही हूँ। मुझे पूरी आशा है कि जब तुम बड़े हो जाओगे तो ठीक इसी पेन्सिल की तरह होगे।'

यह सुनकर वह बालक थोड़ा चौंका और पेन्सिल की ओर ध्यान से देखने लगा, किन्तु उसे कोई विशेष बात नजर नहीं आयी। वह बोला, 'किन्तु मुझे तो यह पेन्सिल बाकी सभी पेन्सिलों की तरह ही दिखाई दे रही है।' इस पर दादी माँ ने उत्तर दिया, 'बेटा! यह इस पर निर्भर करता है कि तुम चीजों को किस नजर से देखते हो। इसमें पांच ऐसे गुण हैं, जिन्हें यदि तुम अपना लो तो तुम सदा इस संसार में शांतिपूर्वक रह सकते हो।'

'पहला गुण : तुम्हारे भीतर महान से महान उपलब्धियाँ प्राप्त करने की योग्यता है, किन्तु तुम्हें यह कभी भूलना नहीं चाहिए कि तुम्हें एक ऐसे हाथ की आवश्यकता है जो निरन्तर तुम्हारा मार्गदर्शन करे। हमारे लिए वह हाथ ईश्वर का हाथ है जो सदैव हमारा मार्गदर्शन करता रहता है।'

'दूसरा गुण : बेटा! लिखते, लिखते, बीच में मुझे रुकना पड़ता है और फिर कटर से पेन्सिल की नोक बनानी पड़ती है। इससे पेन्सिल को थोड़ा कष्ट तो होता है, किन्तु बाद में यह काफी तेज हो जाती है, और अच्छी चलती है। इसलिए बेटा तुम्हें भी अपने दुखों, अपमान और हार को बर्दाश्त करना आना चाहिए, धैर्य से सहन करना आना चाहिए। ऐसा करने से तुम एक बेहतर मनुष्य

बन जायोगे।'

'तीसरा गुण : बेटा! पेन्सिल हमेशा गलतियों को सुधारने के लिए रबर का प्रयोग करने की इजाजत देती है। इसका यह अर्थ है कि यदि हमसे कोई गलती हो गयी तो उसे सुधारना कोई गलत बात नहीं है। बल्कि ऐसा करने से हमे न्यायपूर्वक अपने लक्ष्यों की ओर निर्बाध रुप से बढ़ने में मदद मिलती है।

'चौथा गुण : बेटा! एक पेन्सिल की कार्य प्रणाली में मुख्य भूमिका इसकी बाहरी लकड़ी की नहीं, अपितु इसकी भीतर के ग्रेफाईट की होती है। ग्रेफाईट या लेड की गुणवत्ता जितनी अच्छी होगी, लेख उतना ही सुन्दर होगा। इसलिए बेटा! तुम्हारे भीतर क्या हो रहा है, कैसे विचार चल रहे हैं, इसके प्रति सदा सजग रहो।'

'अंतिम गुण : बेटा! पेन्सिल सदा अपना निशान छोड़ देती है। ठीक इसी प्रकार तुम कुछ भी करते हो तो तुम भी अपना निशान छोड़ देते हो। अतः सदा ऐसे कर्म करो जिन पर तुम्हें लज्जित न होना पड़े, अपितु तुम्हारा और तुम्हारे परिवार का सिर गर्व से उठा रहे। अतः अपने प्रत्येक कर्म के प्रति सजग रहो।'

^/ke: dk Lo#i dh 0;k[;k^

—श्री खुशहाल चन्द्र आर्य

108, महात्मागांधी रोड़,कोलकता–6

भारत के अनेक ऋषि, मुनि, सन्त महात्मा व मनीषियों ने धर्म की व्याख्या विविध ा रुपों में की है। मनु महाराज के धर्म सम्बन्धी अनेक श्लोक मनुस्मृति में मिलते हैं, जिसमें यह श्लोक सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं, जिसको अधिकतर धर्म प्रेमी सज्जन जानते हैं।

धृतिः क्षमा दमो स्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धी र्विधा सत्यम क्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।।

इसमें मनु महाराज ने मानवीय दस गुणों को, जिसमें धैर्य, क्षमा, संयम, अस्तेय (चोरी न करना) पवित्रता, ब्रह्मचर्य, बुद्धि, ज्ञान, सत्य और क्रोध न करना को ध ार्म के मुख्य अंग बताये हैं, अर्थात् इन दस गुणों को जीवन में धारण करना ही धर्म है। मनु महाराज का धर्म सम्बन्धी दूसरा श्लोक जो ज्यादा प्रचलित है वह यह हैः

वेदों खिलो धर्म मूलं, स्मृति शीले च तद्विदाम्।

आचार श्चैव साधूनामात्मन स्तुष्टि रेव च ।।

इस श्लोक में मनु महाराज ने धर्म का मूल वेदों को बताते हुए ऋषि प्रणीत स्मृति आदि ग्रन्थों में वर्णित कामों को करना, सत्पुरुषों के आचरण के अनुसार चलना तथा जिस काम को करने से आत्मा प्रसन्न होती हो, उसको धर्म बताया है।

इसी प्रकार मनु का धर्म सम्बन्धी यह कथन भी अति लोकप्रिय है।

''यस्तर्केण अनुसन्धत्ते स धर्म वेदनेतरः''

जो तर्क से अनुसन्धान करता है, वह धर्म को जानता है, दूसरा नहीं। इसका तात्पर्य यह हुआ, जो तर्क पर टिकता है वही धर्म होता है। इसके अलावा ध ार्म की व्याख्या महर्षि कणाद ने इसी भाँति की है।

''य तो अभ्युदय निः श्रेयस सिद्धिः स धर्मः''

जिस कार्य को करने से लोक व परलोक सुधरता हो, वही धर्म है।

धर्म के सम्बन्ध में गोस्वामी तुलसीदास ने भी कई जगह अपने विचार व्यक्त किये हैं। एक जगह ''दया धर्म का मूल है'' कहकर दया को ही धर्म का मूख्य अंग माना है। दूसरी जगह ''परहित सरिस धर्म नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई'' अर्थात् दूसरों का हित करने के समान कोई धर्म नहीं और दूसरों को पीड़ा देने के समान कोई अधर्म नहीं, कहकर परोपकार को ही धर्म की संज्ञा दी है। इसी प्रकार तीसरी जगह तुलसीदास बाबा कहते हैं कि ''धरम न दूसरे सत्य समाना, अगम निगम पुरान बखाना'' यहाँ सत्य को ही प्रमुख ध ार्म माना है।

महाभारत में युधिष्ठिर और यक्ष का प्रसंग आता है, जिसमें यक्ष ने युधि ाष्ठिर से पूछा है कि धर्म का स्वरुप क्या है तब युधिष्ठिर (जो धर्म के विशेषज्ञ थे) ने धर्म जैसे जटिल प्रश्न को सरल बनाते हुए कहा कि ''धर्मस्य तत्तवं निहितं गुहायाम् महाजनोयेन गतः सपन्थाः'' यानि धर्म का विषय इतना गहन है कि जिसको समझना साधारण मनुष्यों के लिए आसान नहीं है, इसलिए युधिष्ठिर ने जन साधारण के लिए सरल भाषा में मनु महाराज के कथन को ही स्पष्ट करते हुए कहा कि ''जिस रास्ते से हमारे महापुरुष गये हैं, उसी रास्ते पर चलना ही धर्म है।'' युधिष्ठिर का कहना तो इसलिए ठीक है कि उससे पहले जितने भी महापुरुष हुए थे वे सभी वेद के मार्ग पर चलने वाले थे। इसलिए युधि ाि ठर व मनुमहाराज के भाव तो वैदिक धर्म पर चलने के लिए ही थे, परन्तु बाद में हमारे पौराणिक भाइयों ने इसका अर्थ स्वार्थ–सिद्धि के लिए महाजनों से तात्पर्य एक तो पूर्वजों के लिए लगा लिया दूसरा उन महापुरुषों के लिए भी

लगाया जो युधिष्ठिर के बाद में हुए थे, जैसे शंकराचार्य, माधवाचार्य, बल्लभचार्य, तुलसी, सूर व नानक आदि। इससे हम वैदिक सिद्धान्तो जैसे ईश्वर अवतार नहीं लेता, सर्वशक्तिमान ईश्वर एक ही है, और गणेश, वि णु, ब्रह्मा, महादेव आदि उसके गुणवाचक नाम हैं, ईश्वर का मुख्य नाम ओ३म् ही है। उसी की स्तुतिप्रार्थनोपसना करनी चाहिए। वर्ण (जाति) व्यवस्था जन्म से न होकर गुण, कर्म, स्वभाव से होती है। वृद्धों व विद्वानों का आदर सत्कार, सेवा, आज्ञापालन करना व उनके आचरण का अनुकरण ही उनकी पूजा है, आदि को न मानने से पौराणिक विचारों को बल मिला और देश में अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड व आपस में जाति पाँति का भेद भाव इतना बढ़ गया, जिससे देश क्षतिग्रस्त ही नहीं बल्कि मृतप्राय बन गया।

धर्म जिज्ञासा को और आगे बढ़ाते हुए जब हम अपने गौरवमय इतिहास का अवलोकन करते हैं तो हमें मृत्युन्जयी भीष्म पितामह का वह उपदेश भी महाभारत में मिलता है जब वे मृत्यु शय्या पर पड़े हुए सूर्य के उत्तरायण आने की प्रतिक्षा कर रहे थे, उसी समय धर्मराज युधिष्ठिर भीष्म के पास आये और उन्होंने कहा कि हे पितामह! आप धर्मज्ञ हो मुझे धर्म के विषय में कुछ जानकारी देवें। तब पितामह ने कहा 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' यानि अपनी आत्मा के विरुद्ध किसी से व्यवहार न करें, अर्थात् जो व्यवहार अपने को अच्छा लगे, वही व्यवहार दूसरों से करना ही धर्म है।

आधुनिक समय के सन्त व विचारक महात्मा गाँधी भी अपनी नित्य की प्रार्थना में यही कहा करते थे, ''वैष्णव जन तो तेने कहिये जो पीर पराई जाने रे''। इसका भाव भी यही है कि दूसरों के दुःख सुख को अपने दुःख सुख के समान समझना ही धर्म है।

महर्षि देव दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ ''सत्यार्थ प्रकाश'' में धर्म को दो पक्षों में उपस्थित किया है। एक आत्मिक दूसरा सामाजिक। आत्मिक पक्ष में तो अधिकतर धर्मवेत्ताओं ने जो धर्म के सम्बन्ध में कहा है, उसी को और अधिक स्पष्ट करते हुए महर्षि ने कहा कि अपनी आत्मा के समान ही दूसरों के दुख–सुख, लाभ–हानि व यश–अपयश को अपना समझना ही सच्चा धर्म है, यानि जो स्वयं को अच्छा लगे वह दूसरों के साथ भी करें, और जो अपने को अच्छा न लगे वह दूसरों के साथ भी कभी न करें। इससे समाज में परस्पर प्रेम व सहयोग की भावना में वृद्धि होती है। दूसरा धर्म के सामाजिक पक्ष को प्रस्तुत करते हुए यह कहा कि प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये कि वह अन्यायी बलवान से

भी न डरे चाहे वह चक्रवर्ती राजा ही क्यों न हो, और उसका अपनी शक्ति के अनुसार सदा विरोध भी करता रहे और न्यायकारी कमजोर से भी डरता रहे एवं उसका सदा समर्थन व सहयोग भी करता रहे। हमसे समाज में अन्याय के पैर नहीं जमने पाते और न्याय की स्थापना सदा बनी रहने से मनुष्य निर्भय होकर अपने धर्म का पालन कर सकता है।

मैं विशेष चर्चा उस धर्म को करना चाहता हूँ, जिसका उपदेश महर्षि दयानन्द ने किसी प्रसंग पर एक जुलाहा को दिया था। जिसमें जुलाहे ने स्वामी जी से पूछा था कि महाराज, मैं एक जुलाहा हूँ दिन भर कठिन परिश्रम करके अपने बच्चों का पालन–पोषण करता हूँ। मेरे लिए पूजा–पाठ करना, सन्ध्या हवन करना व योग–साधना करना तो सम्भव नहीं, मेरे लिए कौन सा ऐसा धर्म है जिसके करने से मेरा उद्धार हो सके, तब स्वामी जी ने कहा, तुम जिस व्यक्ति से तोलकर जितना सूत लेते हो, उसको सच्चाई व ईमानदारी से कपड़ा बुनकर उतना ही तोलकर दे दो और उससे अपने परिश्रम का उचित मूल्य मजदूरी के रुप में ले लो। तुम्हारा उद्धार इसी प्रकार काम करने से ही हो जायेगा।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि सच्चाई व ईमानदारी से अपना कर्त्तव्य पालन करना ही धर्म है। इस धर्म से सिर्फ व्यक्ति की ही नहीं, समाज व राष्ट्र की उन्नति व समृद्धि होनी भी निश्चित है।

आज मेरे देश में इस कर्त्तव्य धर्म की सबसे ज्यादा अवहेलना हो रही है। जिससे देश निरन्तर अवनति व पतन की ओर जा रहा है। इसलिए आज हमें इस धर्म की सबसे ज्यादा आवश्यकता है। यदि हर व्यक्ति चाहे वह किसान हो, मजदूर हो, दुकानदार हो, कारखाने का मालिक हो, डॉक्टर हो, वकील हो, सरकारी मुलाजिम हो, सीमा पर लड़ने वाला सैनिक हो, चाहे देश को चलाने वाला प्रधानमन्त्री हो, सच्चाई व ईमानदारी से अपनी जगह पर रहता हुआ अपने कर्त्तव्य धर्म का पालन करता है और देश के हित को सर्वोपरि समझता है तो देश को कभी भी आँच नहीं आ सकती और समाज व राष्ट्र दिन प्रतिदिन उन्नति व समृद्धि की तरफ अग्रसर होता रहेगा। इसी में व्यक्ति की उन्नति होनी भी निहित है।

इस समय भारत में कर्त्तव्य परायणता वाले धर्म का बड़ा ह्रास हो रहा है। अधिकतर नागरिक अपनी जगह पर कर्त्तव्य का पालन नहीं कर रहे हैं। सब जगह कर्त्तव्य के स्थान पर पैसे को ही महत्व दिया जा रहा है। पैसे की

अंधी दौड़ में प्रधानमन्त्री से चपरासी तक, राजा से रंक तक सभी फँसे हुए हैं। इसलिए कोई भी काम समय पर व सुचारु रुप से नहीं हो पा रहा है। जिसके कारण सम्पूर्ण व्यवस्था अव्यवस्थित होती जा रही है। देश का चारित्रिक पतन होता जा रहा है। सरकारी कारखाने व व्यवसाय ठप होते जा रहे हैं, जिससे देश पर विदेशी ऋण बढ़ता जा रहा है और देश की स्थिति अति नाजुक बनी हुई है। यह सरकार और प्रत्येक जागरुक नागरिक के लिए विचारणीय प्रश्न है।

हमारे आर्यावर्त देश में प्राचीन ऋषि मुनियों ने देश में सुव्यवस्था बनाये रखने के लिए गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार चार श्रम विभाग (वर्ण) व बनाये थे, जिनको ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कहा जाता है। महाभारत युद्ध में अधिकतर विद्धानों, योद्धाओं, नीतिज्ञों व धर्मनेताओं के समाप्त होने से देश में में वेदों का पढ़ना–पढ़ाना प्रायः बन्द सा हो गया, जिससे अज्ञान, अंधविश्वास व पाखण्ड का बोल बाला हो गया और वर्णों को गुण, कर्म, स्वभाव से न मानकर जन्म के आधार पर माना जाने लगा, और उनको वर्ण की जगह जाति की संज्ञा दे दी गई। आज यह चारों जातियाँ ही अपने–अपने कर्त्तव्य धर्म से च्यूत हैं, जो देश के पतन का मुख्य कारण बनी हैं।

यदि भारत को उन्नत व सम द्विशाली बनाना है तो प्रत्येक भारतीय को अपने–अपने कर्त्तव्य धर्म का पूरी सच्चाई और ईमानदारी के साथ पालन करना अति आवश्यक है, और देश के हित को अपने तथा अपनी पार्टी के हित से ऊपर समझना बहुत जरुरी है। तभी भारत उन्नति करता हुआ पुनः विश्वगुरु तथा सोने की चिड़िया कहलाने के योग्य बन सकता है।

lPph xfjek fdl dh x# dh ;k xkfoUn dhA

–श्री नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

सद्गुरु का आश्रय–सहारा सदा मिले। 'सति गुरु तेरी ओट'। एक प्रसिद्ध उक्ति है– 'गुरु गोविन्द दोनो खड़े, काके लागें पायं' बलिहारी गुरु आपनो, जो गोविन्द दियो दिखाय।' एक सामान्य जिज्ञासु या साधक के सम्मुख प्रेरणा के दो मुख्य स्रोत कहे जाते हैं, एक पग–पग पर रास्ता दिखलाने वाले पथ–प्रदर्शक गुरु और दूसरे अपने गुरु या आचार्य के प्रेरणा के सूत्रधार गोविन्द। कहते हैं गुरु को नमस्कार है, क्योंकि गुरु, ब्रह्म, विष्णु शिव के तुल्य हैं, गुरु साक्षात् परब्रह्म ओंकार है।

गुरु ब्रह्म गुरु विष्णु गुरुदेवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात्पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

गुरु का अर्थ है, श्रद्धेय, आदरणीय, अध्यापक, शिक्षक पारिभाषिक रुप से गुरु वह है, जो गायत्री मन्त्र का उपदेश करे, और शिष्य को वेदाध्यापन कराए। रघुवंश में कविकुलगुरु कालिदास की उक्ति है– 'आज्ञा गुरुणां हमविचारणीयां' गुरुयों की आज्ञा पर संकल्प–विकल्प न करें, उसका दृढ़ता से पालन करें। इसकी तुलना में गोविन्द का अर्थ है– गोपालक, गौशाला का अध यक्ष, कृभण, बृहस्पति। वैसे पार्थिव गुरु और गोपालक गोविन्द की अपेक्षा उन दोनों के ही असली नियामक सूत्रधार निराकार निर्गुण पर ब्रह्म ओंकार परमात्मा जो घर–घर के वासी और सच्चे गुरु और पृथ्वीरुपी गौ के सच्चे गोपाल हैं। उक्त वचनों में भी किसी गोपालक गोविन्द की अपेक्षा उन दोनों के ही असली नियामक सूत्रधार निराकार निर्गुण पर ब्रह्म ओंकार परमात्मा, जो घट–घट के वासी और सच्चे गुरु और पृथ्वी रुपी गौ के सच्चे गोपाल हैं। उक्त वचनों में भी किसी गोपालक स्वामी की जगह जगत्रियज्ञा परमेश्वर का ही गुणगान किया गया है।

बम्बई महानगर में श्री महादेव गोविन्द रानाडे नामक एक विख्यात न्यायाधीश रहते थे। वह देश–विदेश की अनेक भाषाऐं सीखना चाहते थे। उन्होंने बंगला सीखने के लिए एक बंगाली नाई की सहायता ली। वह हजामत बनवाते समय बंगला भी सीखने लगे। इस पर रानाडे की पत्नी ने अपने पति से कहा– 'एक जज होकर भी आपने एक नाई को अपना गुरु बनाया, लोग क्या कहेंगे? क्या नाई को गुरु बनाना अपमानजनक नहीं है?' न्यायाधीश रानाडे ने कहा– 'इसमें अपमान की क्या बात है। अवधूत दत्तात्रेय ने कीड़े–मकोड़ों, पशु–पक्षियों आदि 24 को अपना गुरु बनाया था। उन जैसे साध ाक ने कीट–पतंगों पशु–पक्षियों को अपना गुरु बनाया था, परन्तु मैंने तो मनुष्य–इन्सान को अपना गुरु बनाया है।

कीट–पतंगों से भी शिक्षा स्वभावतः जिज्ञासा होगी कि अवधूत दत्तात्रेय को किन चौबीस कीट–पतंगों, पशु–पक्षियों सरीखे गुरुओं से सीख मिली थी, और उन्होंने इन मूक प्राणियों से क्या शिक्षा ग्रहण की थी?

कहते हैं कि एक अवधूत को मस्ती में घूमते विचरण करते देखकर राजा यदु ने पूछा–'संसार में सभी लोग इच्छाओं और लालच की आग से जल रहे हैं, पर आप को देखकर लगता है कि आप तक उनकी आँच तक भी नहीं पहुंच पाती। आपको देखकर लगता है कि जंगल में आग लगने पर कोई मस्त हाथी जल के भीतर क्रीड़ा कर रहा हो। कृपा कर बतलाऐंगे ऐसा क्यों? (जनेषु

दहयमानेषु काम लोभदावगनना, न तप्यसे ऽ खिना मुक्तो गंगाभ्यःस्थ इव द्विपः।।)

वह अवधूत दत्तात्रेय थे उन्होंने जवाब दिया– 'मैंने अनेक गुरु बनाए हुए हैं। उनसे सीख लेकर इस तरह मैं विर्दन्द्धू–मुक्त होकर विचरण करता हूं। अवधूत दत्तात्रेय के गुरु थे– पृथिवी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, कबूतर, अजगर, समुन्द्र, पतंग, मधुमक्खी, हाथी, शहद ले जाने वाला, हीरण, मछली, पिंगल, वेश्या, कुरर पक्षी, बालक, कुमारी कन्या, बाण बनाने वाला, सांप मकड़ी और भृंगी कीड़ा।

दत्तात्रेय जी ने बतलाया– 'उन्होंने पृथिवी से धीरज रखने क्षमा करने की शिक्षा ग्रहण की, पृथिवी सब तरह के उत्पात करने के बावजूद न रोती है, न बदला लेती है, इसलिए बुद्धिमान् व्यक्ति को कभी अपना धीरज नहीं खोना चाहिए। (तद् विद्धान्न चलेन्मार्गादन्व शिशं श्रिनेव्रतम्) इसी प्रकार पृथिवी की सन्नति हैं वृक्ष और पहाड़। उनका जन्म ही दूसरों के उपकार के लिए हुआ है– सज्जन पुरुषों को दोनों से परोपकार की शिक्षा लेनी चाहिए (साधुः शिक्षेत् भूभ सत्तो नगशिष्यः परात्मताम्) दत्तात्रेय ने बतलाया कि उन्होंने पाया कि प्राणी की प्राणवायु के लिए आवश्यक भोजन ही पर्याप्त है। वायु से मैंने सीखा किसी गुण–दोष से लिपटे नहीं, वायु की तरह शुद्ध रहें। आकाश से मैंने सीखा जैसे वह सब से अछूता है, किसी से लगाव नहीं, उसी प्रकार आत्मा को सब से अछूता रखें। जल से सीखा जैसे वह स्वच्छ, मधुर और पवित्र रहता है, वैसे ही हम भी बने रहें। अवधूत दत्तात्रेय ने अग्नि से सीखा कि सब कुछ पचा लेना चहिए और किसी पदार्थ का संग्रह नहीं करना चाहिए।

लकड़ियों और पदार्थों में लगी अग्नि पदार्थों जैसी जान पड़ती है, वैसी नहीं होती, इसी प्रकार सब में व्याप्त आत्मा नाना रुपों में दिखलाई देती है, परन्तु भीतर एक है।

अवधूत दत्तात्रेय ने चन्द्रमा से सीख ली कि जैसे कलाओं के घटने–बढ़ने के बावजूद चन्द्रमा एक रहता है, जन्म से मृत्यु तक शरीर घटता–बढ़ता है, पर आत्मा पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। दत्तात्रेय जी ने कपोत या कबूतर से शिक्षा ग्रहण की, किसी से अधिक स्नेह नहीं करना चाहिए, अन्यथा बहुत कष्ट भोगना पड़ता है। (नातिस्नेहः प्रसंगों वा कर्त्तव्यः कवापि केनचित्, कुर्वन् विन्देत समायं कपोत इव दीनधीः)

उन्होंने अजगर से शिक्षा ली मीठा, फीका, कम ज्यादा जो कुछ भी मिले उसी में सन्तो ा माने। (ग्रासं सुस भटं विरसं महानां लोकमेव वा।

यदश्च्छयेवापपतितं गुसेद जगरो ऽक्रियाः।।) अवधूत दत्तात्रेय ने पतंग से शिक्षा ली कि रुप के मोह में पढ़कर आग में न कूदें। भौंरे से सीख ली कि जहां से भी सार तत्त्व मिले, उसे ले लें। हाथी से शिक्षा ली कि काठ या लकड़ी से बनी स्त्री को भी कभी स्पर्श न करें।

अवधूत दत्तात्रेय ने मधु या शहद का छत्ता तोड़ने वाले से शिक्षा ली कि किसी भी चीज का संग्रह न करें। 'खाय न खर्चे सूमधन, चोर सबै ले जाए'। (न देयं नोप भोग्यं न लुब्धैर्य दुःख सच्चितम् मुड़ को तदपि तन्खन्यो मध ुहेवार्थविमधु' हरिण से सीख ली कि संगीत, नाच–गाने के चक्कर में कभी न फंसे। मछली से शिक्षा ली की जीभ के स्वाद में कभी न पड़े। अन्यथा कांटे में फंसे मांस या रोटी के टुकड़े में प्राण गंवाना होगा। जीभ को जीतना जरुरी है, जिसने जीभ को जीत लिया, सारी इन्द्रियाँ जीत लीं। (तावत् जितेन्द्रियों न स्यात विजितान्येन्द्रिय पुमान्। नजयेद् रसनं यावत् जितश सर्व जिते रसे।।

पिंगला नाम वेश्या से शिक्षा ली कि उम्मीद खास तौर से धन की उम्मीद कभी न करें, अन्न की आशा छोड़ने पर वह सुख से सोई। कुरर पक्षी से शिक्षा ली कि किसी भी पदार्थ का संग्रह नहीं करना चाहिए। संग्रह से दुख होता है, जो अंकिंचन है, वह सुखी रहता है। बालक से यह सीख ली कि हमें सदा निश्चिन्त और आनन्द में मगन रहना चाहिये। कुमारी कन्या से शिक्षा ली कि कई लोग साथ रहें तो संघर्ष होता है, इसलिए अकेला ही विचरण करे। वह कुमारी धान कूट रही थी, हाथों में पहनी चूड़ियाँ आवाज करने लगीं, बाहर मेहमान बैठे थे, तब उसने एक–एक चूड़ी रखी, तब बिना आवाज के धान कुट गया।

एक बाण बनाने वाला कारीगर बाण बना रहा था, उसके पास बाजे–गाजे के साथ बारात निकल गई, उसे पता ही नहीं चला। उससे सीखा, आसन प्राणायाम, अभ्यास–वैराग्य से मन को वश में कर एक लक्ष्य की पूर्ति में लगा दें। (मन एकत्र संयुज्याजिश्वसो जितासनः। वैराग्याभ्यासयोगे धि ्रयमाणमतन्द्रियः।)

अवधूत दत्तात्रेय ने सांप से शिक्षा ग्रहण की कि उसकी तरह एकाकी विचरे, कहीं घर न बनाए। मकड़ी से शिक्षा ली परमेश्वर भी उसकी तरह जाल फैलाकर उसी में विहार करते हैं, फिर उसे निगल जाते हैं। भ ंगी ये यह शिक्षा ग्रहण की कि एकाग्र होकर मन को लगाने पर मन जिसमें लगा होता है, वह स्वयं भी वही हो जाता है। मन चाहे प्रेम से लगाओ, चाहे द्वेष से या

भय से उसे लगाओ तुम उस जैसे हो जायेगे।

यत्र यत्र मनो देही धारयेत सकलं धिया।

स्नेहाद द्वेषाद् मयाद् वायिा याति लात्तन्सरुपताम्।

गुरु वह है, मानव जिससे कुछ ग्रहण करे, कोई शिक्षा या सीख ले, फिर वह चाहे कीट पतंग तो, या प्राणी विशेष, प्रकृति का कोई तत्त्व हो, उन सबसे अवधूत साधक दत्तात्रेय की तरह शिक्षा ग्रहण की जा सकती है, अथवा एक सामान्य हीन कार्य करने वाला मानव हो, शिक्षार्थी, जस्टिस, न्यायाधीश रानाडे की तरह उससे भाषा या शिक्षा ग्रहण कर सकता है।

भारत देश में युगों से गुरु–शिष्य परम्परा रही है, यहां गुरु विश्वामित्र, वशि ठ, संचोपति, धौम्य, याज्ञवलक्य, द्रोणाचार्य, विरजानन्द आदि अनेक प्रातः स्मरणीय गुरु आचार्य हुए हैं। उनके भी श्रीराम, श्री क भण, अर्जुन, सुदामा, शंकर, विवेकानन्द, दयानन्द, सरीखे प्राचीन अर्वाचीन शिष्य हुए हैं। गुरुकुलों एवं ऋषि आश्रमों की लम्बी परम्परा रहीं है। भगवान के चरणों में उनकी शिक्षाओं को ग्रहण करने में गुरुओं की भूमिका की सदा महत्ता रही है, जहां से भी कोई अच्छी शिक्षा मिले, उसे लो। तैत्तिरीय उपनिषद में लिखा है–विद्याघ्ययन पूर्ण होने पर गुरु उन्हें सीख देता था–सत्य बोलो, धर्म का आचरण करो, स्वाध्याय सत्यचरण अपने सासांरिक सामाजिक दायित्यों के निर्वाह में कभी प्रमाद न करो। माता–पिता, आचार्य, अतिथि आदि दिव्य शक्तियों का समादर करो। गुरुजनों से जितनी अच्छी शिक्षाऐं मिली हैं, उनका पालन करो। गुरुओं की शिक्षाओं पर चलो, तुम्हारा जीवन सफल हो जाएगा। यही गुरुओं एवं गुरु परम्परा की दीक्षा है।

अभ्युदय

बी–22, गुलमोहरपार्क, नई दिल्ली

Children's Quest by Madan Raheja **Rs. 60.00**

Children accept the beliefs what we teach them in their childhood and they follow the same beliefs life long. It's our very important and prime duty to teach them properly about our Indian culture and ancient religious beliefs.

Nowadays children are so smart and clever that sometimes they ask such complicated religious questions that even their parent cannot satisfy them with appropriate answers because they themselves do not know the proper answers.

Religious teachings does have an explanation about the emptiness one feels inside him/her which school & university educations doesn't fulfill. This helps us making our lives successful, worthy and useful.

This book has two sections Primary for juniors & Secondary for seniors students according to their age.

Who creates the world? Where does God live? Does God listen to our prayers? What should we do if someone abuses us? What is the meaning of 'Namaste'? Which three things are eternal? Does a soul reside in the body? What kind of knowledge bestowed in the four Vedas? What is the definition and attributes of 'Dharma'? What is the right way to worship God?

OM the symbol of GOD by J.M.Mehta **Rs. 60.00**

OM is the symbol of GOD, the creator of all universe. This sacred symbol can be depicted in writing in different ways. ¬ is a shorthand representation of the sacred, beautiful and unique one lettered symbol to represent the most glorious name of the SUPREME BEING.

In this small book, an attempt has been made to describe briefly, various aspects of OM. These inter-alia include its meanings, the origin, its common usage and description in various Holy Scriptures and its linkage with other faiths etc.

Some methods of meditation and OM JAPA are also stated. In part II of this book, famous OM mantras, with their meaning, have also been mentioned. Several OM songs (Hktu) have also been included for the benefit of the general reader.

It is hoped that the readers will appreciate the sincere efforts made in the compilation of this small volume which should attract the attention of all God-loving people.

फरवरी 2014 में प्रकाश्य

ऋषि दयानन्द के भक्त, प्रशंसक और सत्संगी

डॉ. भवानीलाल भारतीय रु. ६५.००

प्रस्तुत ग्रन्थ में लेखक ने ऐसे ५० व्यक्तियों के जीवनव□त तथा स्वामी दयानन्द से इनके पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना की है, जो भक्त, प्रशंसक तथा सत्संगी-इन तीन वर्गों में परिगणित किये जा सकते हैं।

भक्त से हमारा अभिप्राय उन लोगों से है जो स्वामी दयानन्द के महनीय व्यक्तित्व तथा उनकी लोकहित युक्त भावनाओं के प्रति प्रणतभाव रखते थे। यह आवश्यक नहीं कि ऐसे लोग पूर्णतया वैदिक विचारधारा के अनुयायी ही रहे हों।

प्रशंसकों की श्रेणी में वे लोग हैं जो पौराणिक विश्वासों के प्रति नि□ठा रखने वाले उस सनातनी वर्ग के नेता थे जिनसे स्वामी जी का दीर्घकाल पर्यन्त संघ□ा तथा प्रतिद्वन्द्विता चलती रही।

सत्संगी वर्ग में हम उन लोगों की गणना कर सकते हैं जो विचारों और आस्थाओं में स्वामी जी से कोसों दूर होते हुए भी स्वामी दयानन्द का सत्संग लाभ करना परम उपयोगी मानते थे और उन्हें देश एवं जाति का हित चिन्तक समझते थे।

The Essence of Satyarth Prakash by J.M.Mehta Rs. 75.00

When you have the vision of Truth, doubts evaporate and questions recede into silence. Truth alone shines and knowledge is pure awareness.

However, when you emerge from the vision you feel-specially when you are socially committed and absolutely dedicated-you must speak and find a language simple, clear and forthright, honest to the Truth and nothing else.

Swami Dayanand had a vision of Truth through the Vedas. He was socially committed to humanity and absolutely dedicated to the Truth of existence and the meaning of life. He communicated his experience through *Satyarth Prakash.*

This work can be treated as a comprehensive introduction. It is suggested that after the reading of this work, the conscientious reader should go to the original work of Swamiji for full benefit and appreciation of the light brought out by him from the Vedas and the later scriptures.

Nevertheless, if the reader is hard-pressed for time and can feel content with knowing what *Satyarth Prakash* is like, this work would serve the purpose.

प्रकाशक-अजयकुमार, मुद्रक-अजयकुमार, स्वामी-अजयकुमार, गोविन्दराम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6, अजयकुमार द्वारा सम्पादित, प्रिंटर्स-अजय प्रिंटर्स, 1586/C-13, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 में प्रिंट करा, वेदप्रकाश कार्यालय, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6 से प्रसारित किया। न्यायक्षेत्र-दिल्ली।